श्रीसम्यक्चारित्राय नमः।

श्रीइन्द्रियपराजयशतक

भाषा पद्यानुवाद सहित।

जिसका

बुद्धूलाल श्रावक, देवरी जिला सागर निवासीने

हिन्दीभाषामें पद्यानुवाद किया।

और

बम्बईके

निर्णयसागर प्रेस, कोलभाट लेन नं. २३ में बा. रा. घाणेकरके

प्रबंधसे छपाकर प्रसिद्ध किया.

प्रथमवार १०००] [श्री वीरनिर्वाण सम्वत् २४३८

मूल्य दो आना।

प्रस्तावना ।

पाठकगण ! इस छोटेसे ग्रंथको जो कि आपके हस्तगत है शाह मोगीलाल ताराचन्दजीने अहमदाबादमें गुजराती भाषान्तर सहित प्रकरणमालामें छपाया है । ग्रंथ उपयोगी और सरस है, संस्कृतादिमें इसकी अन्यान्य टीका हुई होंगी, परन्तु वे मेरे देखनेमें नहीं आई । मैंने केवल उपर्युक्त पुस्तकपरसे हिन्दी साहित्यके प्रेमियोंकी सेवा की है । जहांतक होसका है, गाथाका सम्पूर्ण आशय पद्यमें लानेका प्रयत्न किया है, और इस विषयमें महाराज सोमप्रभाचार्य्यजीविरचित और पंडित बनारसीदासजी द्वारा अनुवादित सूक्तमुक्तावलीका अनुकरण किया है ।

अनुसंधान करनेसे यही प्रतीत हुआ है कि, इस ग्रंथके कर्त्ता एक श्वेताम्बराचार्य्य हैं । परन्तु पाठकगण ! यदि आप इसे आद्योपान्त वांच जावेंगे, तो आपको विदित हो जावेगा कि, इस ग्रंथमें कोईभी साम्प्रदायिक झगड़ा नहीं है । हां ! जो श्वेताम्बरके नाममात्रसेही चिड़ते हैं, उनके लिये कुछ उपाय नहीं है । परन्तु हम यह बात उच्च स्वरसे कहेंगे कि, जो मनुष्य देवदुर्लभ और अनन्तभूत कालसे अमिल ऐसे सम्यक्चारित्रका लालसी है, वह चाहे दिगम्बर या श्वेताम्बरके गृहमें उपजा हो, और चाहे अन्य ब्राह्मण क्षत्रियादिकी संतान हो, उसे यह ग्रंथ मंत्रका काम देनेमें समर्थ होगा । अस्तु ! हम जैसोंकी क्षुद्र लेखिनीसे ऐसे अपूर्व और लाभकारी ग्रंथकी प्रशंसा लिखी जाना ग्रंथका गौरव घटाना है । पाठक इसे स्वयम् पढ़ें और अपनी क्षयोपशम शक्तिके अनुसार ज्ञान वैराग्यका अनुभव करें । इस पुस्तकमें ऐसी बहुतसी गाथाएँ और छंद हैं, जो शास्त्रसभा और व्याख्यानके समय दृष्टान्तों और उपदेशोंके पुष्टीकरण करनेमें उपयोगी हो सकते हैं, अतः देशके वक्ताओं, श्रोताओं,

उपदेशकों, शिक्षकों और विद्यार्थियोंसे हम आग्रह करते हैं कि, वे इस पुस्तकसे अवश्य लाभ लेवें और हमारा परिश्रम सफल करें । बालकोंके सुकोमल हृदयमें प्रारंभसे ही वैराग्य और ब्रह्मचर्य्यका अंकुरारोपण होजावे, इस लिये दिगम्बर श्वेताम्बर और अन्य धर्मावलम्बियोंकी पाठ-शालाओंमें यह ग्रंथ पढाया जावे, तो भी अधिक लाभकी संभावना है । ग्रंथ और स्वाध्यायका मुख्य तात्पर्य्य अपने और दूसरोंके आत्माको मिथ्यात्व अज्ञान और कषायसे बचाकर सम्यक्चारित्र ग्रहण करानेका है आशा है कि, सुज्ञ पाठकगण हमारे इस छोटेसे निवेदनपर अवश्य ध्यान देंगे ।

पुद्गल वर्गणाएं स्वभावसे ही वर्ण शब्दादिरूप परिणमन करती हैं, इस लिये इस ग्रंथके प्रकाशित करनेमें यद्यपि मेरी कुछ भी करतूति नहीं है, तौ भी यह लिखना आवश्यक है कि, धर्म और समाजकी इस प्रकार सेवा करनेका मुझे यह प्रायः पहिलाही अवसर है । इस लिये इसमें अनेक त्रुटियां होनेकी संभावना है । उन्हें विचारशील पाठक मुझे बालक जान क्षमा करेंगे । और पत्रद्वारा सूचना देकर अपनी सज्ज-नताका परिचय देंगे. जिससे द्वितीयसंस्करणमें त्रुटि निवारण करनेकी चेष्टा की जासके ।

भवदीय—

बुद्धूलाल श्रावक,

अध्यापक श्रीजैनअनाथाश्रम, हिसार (पंजाब)

श्रीजितेन्द्रियाय नमः ।

इन्द्रियपराजयशतक ।

भाषापद्यानुवादसहित ।
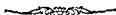
मंगलाचरण (अनुवादककी ओरसे)

छंद मालिनी ।

वृषभ प्रथम स्वामी, मुक्तिदानी नमामी ।
तुवमुखप्रगटानी, दिव्यवानी नमामी ॥
तुवपदविसरामी, आत्मध्यानी नमामी ।
तुववचसरधानी, तत्वज्ञानी नमामी ॥ १ ॥

आर्या ।

सुचिय सूरो सो चे-व, पंडिओ तं पसंसिमो णिच्चं ।
इंदियचोरेहिं सया, ण लुट्टियं जस्स चरणधणं॥१॥

दोहा ।

शूरवीर पंडित वही, सदा प्रशंसागार ।
चारितधन जाकौ नहीं, हरत अक्ष-चटमार ॥ १ ॥

इंदियचवलतुरंगे, दुग्गइमग्गाणुधाविरे णिच्चं ।
भाविअ भवस्सरूवो, रुंभइ जिणवयणरस्सीहिं॥२॥

अच्छ अश्व अति चपल नित, धकत कुगतिकी ओर।
थाँभत भवज्ञाता सुधी, खेंचि सु जिनवच डोर॥ २॥

इंदियधुत्ताणमहो, तिलतुसमित्तंपि देसु मा पसरं।
जइ दिण्णो तो णीओ, जत्थ खणो वरिसकोडिसमं३

सोरठा।

तिलतुसमात्र प्रसार, अक्ष ठगनको जनि करहु।
नहिं तो नरक तयार, कोटि वरससे पल जहां॥ ३॥

अजिइंदिएहिं चरणं, कट्ठंव घुणेहि किरइ असारं।
तो धम्मत्थिहि दढ्ढं, जइयव्वं इंदियजयंमि॥ ४॥

जह कागिणीइ हेउं, कोडी रयणाण हारए कोई।
तह तुच्छविसयगिद्धा, जीवा हारंति सिद्धिसुहं॥५॥

नरेन्द्र छन्द (जोगीरासा)।

इन्द्रियदम विन पोच चरित सब, जीर्ण काष्ठवत जानो।
तातें श्रावकधर्म चहो तो, अविचल उद्यम ठानो॥
कानी कौड़ी हेतु कोउ शठ, कोटि रतन ज्यों हारे।
तुच्छ विषयमें रक्त होय तिमि, जीव मोक्षसुख टारे॥५॥

तिलमित्तं विसयसुहं, दुहं च गिरिरायसिंगतुंगपरं।
भवकोडिहिं ण णिट्ठइ, जं जाणसु तं करिज्झासु॥६॥

सोरठा।

गिरि समान दुखदाय, तिल प्रमान हू विषयसुख।
कोटिक भव लगि पाय, जो जानै सो कर जिया॥६॥

शार्दूलविक्रीडित ।

भुंजंता महुरा विवागविरसा, किंपागतुल्ला इमे,
कच्छूकंडुअणं व दुक्खजणया, दाविंति बुद्धिं सुहे॥
मज्झण्हे मयतिण्हियव्व सययं,मिच्छाभिसंधिप्पया,
भुत्ता दिंति कुजम्मजोणिगहणं,भोगा महावैरिणो ७

मत्तगयंद (सवैया)।

भोगतमें मधुसे परिणाममें,
हैं किमपाकसे प्राण हनैया ।
खाज खुजावतमें रस आवत,
यों दुखमें सुखबुद्धि दिवैया ॥
ग्रीषमकी मृग प्यास समान,
वृथा विपरीत विभाव विछैया ।
भोग महा रिपु भूरि कुजोनिमें,
भोगनहारकों डारत भैया ॥ ७ ॥

अनुष्टुप्।

सक्का अग्गि णिवारेउं, वारिणो जलिउवि हु ।
सव्वोदहिजलेणावि, कामग्गी दुण्णिवारओ॥८॥

दोहा ।

दावा अनल प्रचंड अति, बुझत गिरत जलधार ।
पै सागर भर सलिलसों, कामानल अनिवार ॥ ८ ॥

आर्या ।

विसमिव सुहंमि महुरा,
परिणाम णिकाम दारुणा विसया॥

कालमणंतं भुत्ता,
अज्जवि मुत्तं न किं जुत्ता ॥ ९ ॥

तोटक छंद।

विषयानिविषैं पहिलें कल है।
विषतें अति दारुण हू फल है॥
चिरकालतें भोगत आतम है।
नहिं छोड़त क्या यह लाजिम है? ॥ ९ ॥

विसयरसासवमत्तो, जुत्ताजुत्तं न जाणई जीवो ॥
झूरइ कलुणं पच्छा, पत्तो णरयं महाघोरं ॥ १० ॥

दोहा।

विषय विरस मदमें मतौ, भल अनभल न सुझाय।
घोर शुभ्रमें जव परै, तव आतम बिललाय ॥ १० ॥

जह णिंवहुमपत्तो, कीडो कडुअंपि मण्णए महुरं ॥
तह सिद्धिसुहपरुक्खा, संसारदुहं सुहं विंति ॥ ११ ॥

कडुक नीमकों कीट ज्यों,
मधुर मान भख लेत।
त्यों शिवसुखतें विमुख भवि,
दुखहिं गिनत सुखखेत ॥ ११ ॥

अथिराण चंचलाण य,खणमित्त सुहंकराण पावाणं।
दुग्गइणिवंधणाणं, विरमसु एआण भोगाणं ॥ १२ ॥

भोग निबंधक कुगतिके, महा पापके धाम।
अथिर चपल छणसुखद ये, तजहु आतमाराम ॥ १२ ॥

---

१ चैन।

पत्ता य कामभोगा सुरेसु असुरेसु तह य मणुएसु ॥
ण य जीव तुज्झ तित्ती जलणस्स व कट्ठणियरेण १३

काम भोग भोगे जिया, नर सुर असुरमँझार।
भयो तृप्त नहिं नेकु हू, काठ अनल उनहार ॥ १३ ॥

उपजाति।

जहा य किंपागफला मणोरमा
रसेण वण्णेण य भुंजमाणा।
ते खुट्टए जीविय पच्चमाणा
एओवमा कामगुणा विवागे ॥ १४ ॥

चौपाई।

फल किम्पाक रंग रस जैसो।
खावत लगै मनोहर तैसो ॥
पचै ततच्छन प्राण नसावै।
काम भोग तिमि फल उपजावै ॥ १४ ॥

अनुष्टुप्।

सव्वं वीलविअं गीयं, सव्वं णट्टं विडम्वणा।
सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा ॥१५॥

गाना मानो है विललाना।
नाटक नृत्य विडम्ब समाना ॥
भूषण सकल भार सम जानो।
काम भोग सब दुख सरधानो ॥ १५ ॥

आर्या ।

देविंदचक्कवट्टि-त्तणाइ रज्जाइ उत्तमा भोगा ।
पत्ता अणंत खुत्तो ण य हं तत्तिं गओ तेहिं ॥ १६ ॥

दोहा ।

सुरपति नरपति राज्य अरु, सरस भोगके कोष ।
भोगे वार अनन्त लगि, तऊँ न पायो तोष ॥ १६ ॥

संसारचक्कवाले सव्वेवि य पुग्गला मए बहुसो ।
आहारिया य परिणा-मिया य ण य तेसु तित्तोऽहं१७

चक्रवालमें जगतके, पुदगल द्रव्य अशेष ।
खाय परिणवे वार बहु, लही तृप्ति ना लेश ॥१७॥

अनुष्टुप् ।

उवलेवो होइ भोगेसु अभोगी णोवलिप्पई ।
भोगी भमइ संसारे अभोगी विप्पमुच्चई ॥ १८ ॥

तोटक ।

लिपटाय रहैं भव भोगनमें ।
वह भूरि भमैं भव काननमें ॥
जिहिँ रंचहु राग न भोगनको ।
पद पावत है वह सिद्धनको ॥ १८ ॥

अल्लो सुक्को य दो छूढा गोलया मट्टियामया ।
दोवि आवडिआ कूडे जो अल्लो तत्थ लग्गई१९॥
एवं लग्गंति दुम्मेहा जे णरा कामलालसा ।
विरत्ताओ ण लग्गंति जहा सुक्के य गोलए॥२०॥

नरेन्द्र छंद (जोगीरासा)

सूखे गीले मिट्टीके दो, पिंड भीतिपै मारो।
चिपक रहेगो गीला गोला, यह दृष्टान्त विचारो॥
कामलालसी गीले गोले, जगमें उलझ रहे हैं।
हैं विरक्त ते शुष्क पिंड सम, पद उतकृष्ट लहे हैं १९॥२०

आर्या।

णकट्ठेहि व अग्गी लवणसमुद्दो णईसहस्सेहिं।
ा इमो जीवो सक्को तिप्पेउं कामभोगेहिं॥ २१॥

दोहा।

सहस सरिततैं लवणदधि, तृण ईंधनतैं आग।
ज्यों न अघावै जीव त्यौं, काम भोगमें लाग॥ २१॥

ुत्तूणवि भोगसुहं सुरणरखयरेसु पुण पमाएण।
पिज्जइ णरएसु भवे कलकल तउ तंवपाणाइं॥ २२॥

सोरठा।

भोगे विषय कषाय, सुर नर खगगतिमें जिया।
तातैं देत पियाय, ताम्र औंटकर नरकमें॥ २२॥

को लोभेण ण णिहओ
कस्स ण रमणीहिं भोलिअं हिययं।
को मच्चुणा ण गहिओ
को गिद्धो णेव विसएहिं॥ २३॥

तोटक।

वश लालचके कहु को न मर्यौ? ।
यमके मुखमें कहु को न पर्यौ? ॥
किनकौ चित कामिनि नाहिं हर्यौ? ।
किनने न विषैअनुराग कर्यौ? ॥ २३ ॥

उपजाति छन्द।

खणमित्त सुक्खा बहुकाल दुक्खा ।
पगाम दुक्खा अणिकाम सुक्खा ॥
संसारमोक्खस्स विपक्खभूआ ।
खाणी अणत्थाणउ कामभोगा ॥ २४ ॥

तोटक।

छिनकौं कनसे सुखदायक हैं ।
चिरकाल घने दुखदायक हैं ॥
शिव मारगमें दृढ़ घायक हैं ।
भवभोग अनर्थसहायक हैं ॥ २४ ॥

आर्या।

सव्वगहाणं पभवो, महागहो सव्वदोसपायट्ठि ।
कामग्गहो दुरप्पा जेणभिभूअं जगं सव्वं ॥२५॥
जह कच्छुल्लो कच्छू कंडुअमाणो दुहं मुणइ सुक्खं ।
मोहाउरा मणुस्सा तह कामदुहं सुहं बिंति ॥२६॥

बहुत ही थोड़े (कणके बराबर)।

नरेंद्र (जोगीरासा)।

सकल ग्रहनको जनक महा ग्रह, सब दूषन उपजावै।
काम दुरातम सबही जगको, वश करि नाच नचावै॥
खजया खाज खुजावतमें ज्यों, दुखहीकों सुख मानै।
तिमि मोहातुर कामभोगमें, सुखद कल्पना ठानै॥२५॥२६॥

अनुष्टुप्।

सल्लं कामा विसं कामा कामा आसीविसोवमा।
कामे य पत्थमाणा जे अकामा जंति दुग्गइं॥२७॥

दोहा।

शल्य काम विष काम हैं, आशीविष है काम।
जिय जाकी रुचिमात्रतें, लहैं कुगति दुखधाम॥२७॥

आर्या।

विसए अवइक्खंता पडंति संसारसायरे घोरे।
विसएखु निराविक्खा तरंति संसारकंतारे॥२८॥

सोरठा।

विषयविषें निरपेच्छ[1], भव अटवीतें[2] ते तरैं।
अरु जे कछु सापेच्छ[3], घोर भवोदधिमें परैं॥२८॥

छलिया अवइक्खंता निरावइक्खा गया अविग्घेणं।
तम्हा पवयणसारे णिरावइक्खेण होअव्वं॥२९॥

दोहा।

लहि निरीहैं शिव विन विघन, ठगे जाहिं विषयेच्छु।
तातें प्रवचन-सार यह, होहु सुधी निरपेच्छु[4]॥२९॥

---

१ अपेक्षारहित। २ वन। ३ अपेक्षासहित। ४ इच्छारहित।

विसयाविक्खो णिवडइ णिरविक्खो तरइ दुत्तरभवोघं
देवी दीव समागम भाउअजुअलेण दिट्ठंतो॥३०॥

दोहा।

जिनरक्षित-जिनपालसम, रत्न द्वीपमें जाय।
परैं, तरैं नर विषयकी, इच्छानिच्छसहाय ॥ ३० ॥

जं अइतिक्खं दुक्खं जं च सुहं उत्तमं तिलोअंमि।
तं जाणसु विसयाणं बुड्ढिक्खयहेउअं सव्वं॥ ३१॥

दोहा।

दारुण दुख अरु सरस सुख, जेते तीन जहान।
विषयचाहकी वृद्धि अरु, नाश हेतुतें जान ॥ ३१ ॥

इंदियविसयपसत्ता पडंति संसारसायरे जीवा।
पक्खिव्व छिण्णपंखा सुसीलगुणपेहुणविहूणा॥३२॥

दोहा।

इन्द्रियविषयासक्त जन, संजमशीलविहीन।
छिन्नपंख पंखीनिसम, परैं भवोदधि दीन ॥ ३२ ॥

ण लहइ जहा लिहंतो
मुहलियं अट्ठिअं जहा सुणओ।
सोसइ तालुअ रसिअं
विलिहंतो मण्णए सुक्खं ॥ ३३ ॥
महिलाण कायसेवी
ण लहइ [illegible] तहा पगिम्मो।

सो मण्णए वराओ
सयकायपरिस्समं सुक्खं ॥ ३४ ॥ जुम्मं

दुर्मिल (सवैया)।

भ्रमके वशमें फँसि कूकर ज्यों,
रसके हित अस्थि चवावत है।
निज श्रोणित चाखत मोद भरो,
पर नेकु विवेक न लावत है॥
नर हू वनिता तन सेवनतें,
तनिकौ न कभूँ सुख पावत है।
निज देह परिश्रमके मिसतें,
सुखकी सठ भावना भावत है ॥३३-३४॥ युग्म

सुट्ठवि मग्गिज्जंतो
कत्थवि कयलीइ णत्थि जह सारो।
इंदियविसएसु तहा
णत्थि सुहं सुट्ठुवि गविट्ठं ॥ ३५ ॥

दोहा।

वहु विधि खोजत हू नहीं, रंभ[1]थम्भमें सार।
तैसे इन्द्रियविषयसुख, जानहु सदा असार ॥ ३५ ॥

सिंगारतरंगाए विलासवेलाइ जुव्वणजलाए।
के के जयंमि पुरिसा णारीणइए ण वुड्डंति॥३६॥

---

१ केलेका खंभ।

जोवन सलिल विलास तट, अरु श्रृंगार तरंग;।
को को नर बूड़े नहीं, वनिता सरिता संग ॥ ३६

सोअसरी दुरिअदरी
कवडकुडी महिलिया किलेसकरी।
वइरविरोपणअरणी
दुक्खाणी सुक्खपडिवक्खा ॥ ३७।

तोटक।

तिय शोकनदी अघचूल अहै।
अरिणी[1] सम द्रोहकीआग दहै॥
छल कुंड भरी कलि[2] कारिणी है।
दुखखानि सदा सुखहारिणी है॥ ३७॥

अमुणि अमण परिकम्मो
सम्मं को णाम णासिउं तरई।
वम्महसर पसरोहे
दिट्ठिच्छोहे मयच्छीणं ॥ ३८॥

चौपाई।

चित्त विशुद्ध कियो जिन नाहीं।
ऐसे मानव को जगमाहीं॥
मृगनैनीतें वरसन हारे।
वक्र चितौन वान जिन टारे॥ ३८॥

1 चकमकपत्थर। 2 तकरार।

परिहरसु तओ तासिं दिट्ठी दिट्ठीविसस्स व अहिस्स।
जं रमणिणयणवाणा चरित्तपाणे विणासंति ॥३९॥

दोहा।

जा नारीके नैन शर, नाशत चारितप्रान।
दृष्टीविषअहि[1] सम नज़र, तजो ताहि बुधिवान ॥ ३९॥

सिद्धंतजलहिपारंगओवि विजिइंदिओवि सूरोवि।
दिढचित्तोवि छलिज्जइ जुवइपिसाईहि खुड्डाहिं ४०

तोटक।

परमागम सागर पार कियो।
वश अच्छ किये दृढ़ जासु हियो॥
अति भूरि पराक्रम है जिनको।
यह डाइन नारि छलै तिनको॥ ४०॥

मणयणवणीयविलओ
जह जायइ जलणसंणिहाणम्हि।
तह रमणि-संणिहाणे
विद्दवइ मणो मुणीणंपि ॥ ४१॥

दोहा।

अनल निकट गलि जात जिमि, माखन मोम तुरंत।
तिमि वनिताके ढिग वसत, मुनिजनचित्त चलंत॥४१॥

णीअंगमाहि सुपओ-
हराहि उप्पिच्छमंथरगईहिं।

---

१ एक प्रकारका सांप जिसकी दृष्टि पड़नेसे विष चढ़ जाता है।

महिलाहि णिम्मगा इव
गिरिवरगुरुआवि भिज्झंति ॥ ४२ ॥

पयोधारिनी निम्नगा, गति धीमी मनहार ।
गिरिवरसे गिरि जात परि, वनिता सरिता धार ॥४२॥

विसयजलं मोहकलं विलासविव्वोअजलयराइण्णं
मयमरयं उत्तिण्णा तारुण्णमहण्णवं धीरा ॥ ४३ ॥

अरिल्ल ।

मोह पङ्क जल विषय, मगर अभिमान हैं ।
हावरु भाव विलास, जन्तु उनमान हैं ॥
ऐसौ यौवन महा, समुद्र अपार है ।
धीरवीर नर ताको, पावैं पार है ॥ ४३ ॥

जइवि परिचत्तसंगो तवतणुअंगो तहावि परिवडई ।
महिलासंसग्गीए कोसाभवणूसियमुणिव्व ॥४४॥

तोटक ।

तजि संग कुटुम्ब भये तपसी ।
तपतें जिनने निज देह कसी ॥
वनिता संग ते नर हू विनसे ।
गनिकाग्रह ज्यों मुनिराज वसे ॥ ४४ ॥

सव्वग्गंथविमुक्को सीईभूओपसंतचित्तो अ ।
जं पावइ मुत्तिसुहं ण चक्कवट्टीवि तं लहई ॥ ४५ ॥

दोहा ।

सर्व परिग्रहतैं रहित, शान्ति शान्तचित जोय ।
ताके जैसो सुख नहीं, चक्रपतीकौ होय ॥ ४५ ॥

खेलंमि पडिअमप्पं जह ण तरइ मच्छिआवि मोएऊ।
तह विसयखेलपडिअं ण तरइ अप्पंपि कामंधो ४६॥

कफमें फँसि माखी निजहिं, सकै नहीं सुरझाय।
कामअंध त्यों जीव हू, विषयविषैं उरझाय ॥ ४६ ॥

जं लहइ वीयराओ सुक्खं तं मुणइ सुच्चिअ ण अण्णो
णवि गत्ता सूअरओ जाणइ सुरलोइअं सुक्खं४७॥

चौपाई।

सुख विरागको लहहिं विरागी।
जानहिं नहीं विषयअनुरागी॥
गर्तनिवासी शूकर जैसो।
सुरपुर सुख जानै नहिं कैसो ॥ ४७ ॥

जं अज्झवि जीवाणं विसएसु दुहावहेसु पडिबंधो।
तं णज्झइ गुरुआणवि अलंघणिज्झो महामोहो४८॥

दोहा।

अजहूं दुखदा विषयकों, धारत है जिय संघ।
तातें जानों मोह रिपु, गुरुजनतें हु अलंघ ॥ ४८ ॥

जे कामंधा जीवा रमंति विसएसु ते विगयसंका।
जे पुण जिणवयणरया ते भीरू तेसु विरमंति ४९॥

कामअंध जे पुरुष ते, विलसत भोग निशंक।
अरु जिनवचअनुरक्त ते, विरचैं करि जग शंक ॥ ४९ ॥

---

१ गड्ढा। २ महापुरुष।

काव्यम् ।

अमुइमुत्तमलपवाहरूवयं
वंतपित्तवसमज्झफोफसं ।
मेअमंसवहुहड्डकरंडयं
चम्ममित्तपच्छाइयजुवइअंगयं ॥ ५० ॥

अरिल्ल ।

अशुचि मूत्र मल वहत, पित्त वान्ती[1] भरी ।
नसैं वसा फोफसा, मेद मज्जा थरी ॥
मांस अस्थिकी मोट, चामसों ढँकि रही ।
कामिनिकी इमि काय, घृणित अतिशय सही॥५०॥

इन्द्रवज्रा ।

मंसं इमं मुत्तपुरीसमीसं
सिंघाण खेलाइअ णिज्झरं तं ।
एयं अणिचं किमिआण वासं
पासं णराणं मइबाहिराणं ॥ ५१ ॥

अरिल्ल ।

आमिष मूत्र पुरीष, आदि मय जानिये ।
कफ श्लेपमको उद्गम, थान प्रमानिये ॥
इमि तियको तन मलिन, अथिर कृमिवास है ।
मानव जे मतिहीन, तिन्हैं वह पास[2] हैं ॥ ५१ ॥

---

१ कै, वमन । २ जाल ।

आर्या।

पासेण पंजरेण य बज्झंति चउप्पया य पक्खीई।
इय जुवइपंजरेणय बद्धा पुरिसा किलिस्संति॥५२॥

तोटक।

दुखपिंजरमाहिं विहंग सहैं।
पशु पाशविषैं जिमि त्रास लहैं।
नरहू तियके तिमि जार परैं।
निहचैं करिके दुख भार भरैं॥ ५२॥

अनुष्टुप्।

अहो मोहो महामल्लो जेण अम्मारिसा वि हु।
जाणंतावि अणिच्चत्तं विरमंति ण खणं ति हु॥५३॥

सोरठा।

जानैं अथिर तमाम, तोहू हम जैसे पुरुष।
पावैं नहिं विसराम, अहो मोह है वीर वर॥५३॥

आर्या।

जुवईहिं सह कुणंतो संसग्गं कुणइ सयलदुक्खेहिं।
ण हि मुसगाणं संगो होइ सुहो सह विलाडेहिं॥५४॥

तोटक।

वश मूसक माँजरिके परिकैं।
दुख पावत है निहचै करिके॥

नर हू अवलानिकी संगतिमें ।
अवशोहि परे दुखपंकतिमें ॥ ५४ ॥

हरिहरचउराणणचंदसूरखंदाइणोवि जे देवा ।
णारीण किंकरत्तं कुणंति धिद्धी विसयतिण्हा ॥५५॥

चौपाई ।

हरि हर ब्रह्मा कार्तिकस्वामी ।
निशिकर दिनकर जे सुर नामी ॥
ते सब होत नारिके दासा ।
धिक धिक धिक धिक यह विषयाशा ॥ ५५ ॥

इन्द्रवज्रा ।

सीअं च उण्हं च सहंति मूढा
इत्थीसु सत्ता अविवेअवंता ।
इलाइपुत्तं व चयंति जाइं
जीअं च णासंति अ रावणुव्व ॥ ५६ ॥

चौपाई ।

जे मतिहीन युवति अनुरागी ।
ते इलाचिसुत सम कुलत्यागी ॥
शीत ताप अत्यन्त उपावें ।
वा रावण इव प्राण गमावें ॥ ५६ ॥

आर्या ।

वुत्तूणवि जीवाणं सुदुक्कराइं ति पावचरियाइं ।

---

१ इसका अभिप्राय ठीक २ समझमें नहीं आया ।

भयवं जा सा सासा पच्चाएसो हु इणमो ते ॥५७॥

जललवतरलं जीयं अथिरा लच्छी विभंगुरो देहो ।
तुच्छा य कामभोगा णिबंधणं दुक्खलक्खाणं ॥५८॥

दोहा ।

जीवन जीवनँ-बुदबुदा, चपल चंचैला जान ।
देह अथिर पोचे विषय, सत सहस्र दुखदान ॥५८॥

इन्द्रवज्रा ।

णागो जहा पंकजलावसण्णो
दट्ठुं थलं णाभिसमेइ तीरं ।
एवं जिआ कामगुणेसु गिद्धा
सुधम्ममग्गे ण रया हवंति ॥ ५९ ॥

तोटक ।

जलपंकविषै करिराँज परै ।
थल देखत पै तट नाहिं धरै ॥
जिय त्यों विषयानिमें पागत है ।
सनमारगमें नहिं लागत है ॥ ५९ ॥

आर्या ।

जह विट्ठपुंजखुत्तो, कीमि सुहं मण्णए सयाकालं ।
तह विसयासुइरत्तो, जीवोवि मुणइ सुहं मूढो ॥६०॥

---

१ पानी (जीवन, पानीके बुदबुदेके समान है) । २ लक्ष्मी । ३ हाथी ।

दोहा।

कृमि ज्यों विष्टाकुंडमें, समझुत सुक्ख सदीव।

मगन होय तिमि विषयमें, सुख मानत सठ जीव ॥६०॥

मयरहरो व जलेहिं, तहवि हु दुप्पूरओ इमो आदा।

विसयामिसंमि गिद्धो, भवे भवे वच्चइ ण तत्तिं॥६१॥

जैसे जलसों ना भरै, कवहुं उदधिको कोप।

त्यों विषयामिषगृद्ध जिय, लहहिं न भव भव तोष॥६१॥

विसयविसट्टा जीवा

उब्भडरूवाइएसु विविहेसु।

भवसयसहस्सदुलहं

ण मुणंति गयंपि णिअजम्मं ॥ ६२ ॥

पद्धरी।

विष विषयमाहिं पीड़ित अतीव।

उद्भटस्वरूप बहु धरत जीव॥

नहिं जानत नर भव वृथा जात।

जो लक्ष भवांतरमें लहात ॥ ६२ ॥

चिट्ठंति विसयविवसा

मुत्तं लज्जंपि केवि गयसंका।

न गणंति केवि मरणं

विसयंकुससल्लिया जीवा ॥ ६३ ॥

१ विषयरूपी मांस। २ नाना प्रकारकी कुचेष्टा करते हैं।

विप विषयांकुश प्रेरित असीव ।
हो रहे अहो बहु विवश जीव ॥
निरलज्ज निशंक भये अनेक ।
यमराज कोप ना गिनत नेक ॥ ६३ ॥

विसयविसेणं जीवा, जिणधम्मं हारिऊण हा णरयं।
वच्चंति जहा चित्तय, णिवारिओ बंभदत्तणिवो॥६४॥

दोहा ।

नरक परैं जिय विषयवश, हाय धरम विसराय ।
यातैं कियो विरक्त मुनि, ब्रह्मदत्त नरराय ॥ ६४ ॥

धिद्धी ताण णराणं, जे जिणवयणामयंपि मुत्तूणं ।
चउगइविडंवणकरं, पियंति विसयासवं घोरं ॥६५॥

चौपाई ।

धिक धिक धिक ते नर हतभागी ।
जिनवचनामृतरसपरित्यागी ॥
चहुँगतिरूप विटम्बनकारी ।
विषय घोर मद पियत अनारी ॥ ६५ ॥

मरणेवि दीणवयणं, माणधरा जे णरा ण जंपंति।
तेवि हु कुणंति लल्लिं, वालाणं णेहगहगहिला ६६

प्राण जाहिं पर गदगदवानी ।
नहिं बोलत जे नर अभिमानी ॥
बोलत दीन हीन ते वाचा ।
युवतिनेह जब गहै पिशाचा ॥ ६६ ॥

सक्कोवि णेव खंडइ, माहप्प मड्डप्फुरं जए जेसिं ।
तेवि णरा णारीहिं, कराविआ णिय य दासत्तं॥६७॥

जिनकौ यशमाहात्म्य पुरन्दर[1] ।
मेटि सकै, नहिं हैं जगनरवर ॥
तिनतैं निजदासत्व करावैं ।
अवला यों सवला कहलावैं ॥ ६७ ॥

जउणंदणो महप्पा, जिणभाया वयधरो चरमदेहो ।
रहणेमी राइडई, रायमई कारि धी विसया ॥६८॥

अरिल्ल ।

यदुनन्दन महा पुरुष, नेमिजिन भ्रात जो ।
पंचमहाव्रत धारक, अन्तिमगात जो ॥
ऐसो यदु रथनेमि, नेमि नारीतनी ।
रागरूप बुधि करी, विषय प्रति धिक घनी ॥ ६८ ॥

मयणपवणेण जइ ता-
रिसावि सुरसेलणिच्चला चलिया ।
ता पक्कपत्तसत्ता-ण
इयरसत्ताण का वत्ता ॥ ६९ ॥

दोहा ।

अहो मदनके पवनतैं, मुनिमनमेरु डिगात ।
पकें पानवत सत्व जिन, तिन जनकी कह बात ॥६९॥

---

१ इन्द्र । २ पके हुए पत्तेके समान ।

जिप्पंति सुहेणं वि य, हरिकरिसप्पाइणो महाकूरा।
इक्कव्वि य दुज्जेयो कामो कयसिवसुहविरामो ॥७०॥

करि हरि अहि अति कूर हू, सहजहिं लीजे जीत।
शिवसुखबाधक काम रिपु, दुर्जय जानो मीत ॥ ७० ॥

विसमा विसयपिवासा अणाइभवभावणाइ जीवाणं।
अइदुज्जेयाणी इं-दियाणि तह चंचलं चित्तं ॥ ७१॥

जियको विषम विषयतृषा, भावन जगत अनादि।
तैसहि चंचल चित्त है, दुर्जय इन्द्री आदि ॥ ७१ ॥

कलिमल अरइ अ भुक्खी
वाही दाहाइ विविह असुहाइं।
मरणंपि य विरहाइसु
संपज्जइ कामतवियाणं ॥ ७२ ॥

दाह व्याधि कलिमल अरति, बहु दुख इष्टवियोग।
भूख मरण आदिक लहहिं, कामतस जो लोग ॥७२॥

पद्धतिका।

पंचिंदियविसयपसंगरेसि
मणवयणकाय ण वि संवरेसि।
तं वाहिसि कत्ति य गलपएसि
जं अट्ठकम्म णवि णिज्जरेसि॥७३॥

---
१ हाथी। २ सिंह। ३ सांप।

सोरठा ।

मनवचकाय सँभार, करै न इन्द्री विषयतैं ।
करै न वसु अरि क्षार, धरै कतरनी कंठ ते ॥७३॥

स्रग्विणी ।

किं तुमंधोसि किं वासि धत्तूरिओ ।
अहव किं सण्णिवाएण आऊरिओ ॥
अमयसमधम्म जं विस व अवमण्णसे ।
विसयविसविसम अमियंव बहु मण्णसे॥७४॥

रोला ।

आतमजी कहु अंध, भये कहु कनक चवायौ ।
कै तुमने अब अमिट, रोग निरदोष उपायौ ॥
अंमृत सम जिन बैन, ताहि किमि विष सरधानौ ।
विषम विषय विषरूप, ताहि अंमृत क्यों मानौ ॥७४॥

तुज्झ तुह णाणविण्णाणगुणडंवरो
जलणजालासु निवडंतु जिअ निब्भरो ॥
पयइ वामेसु कामेसु जं रज्जसे
जेहि पुण पुणवि णिरयाणले पच्चसे ॥७५॥

रे जिय तो विज्ञान, ज्ञान गुनको आडम्बर ।
अग्निज्वालमें सर्व, परै अरु बरै निरन्तर ॥
जाकारण तू अजहुं, वक्र भोगनमें राचे ।
नरक अग्निमें पच्यौ, नच्यौ अरु फिरि फिरि नाचे ७५

दहइ गोसीस सिरिखंड छारकए।
छगलगहणट्ठमेरावणं विकए॥
कप्पतरु तोडि एरंड सो वावए।
जुज्झि विसएहिं मणुअत्तणं हारए॥ ७६॥

स्वल्प विषयके हेतु, वृथा नर जन्म गमावैं।
मानो भस्मी हेतु, अगर अरु तगर जलावैं॥
अथवा ते अजकाज, मनो गजराज विकावैं।
केरि सुरतरु निरमूल, मनो एरण्ड लगावैं॥ ७६॥

अनुष्टुप्।

अद्धुवं जीवियं णिच्चं, सिद्धिमग्गं वियाणिया।
विणिअट्टिज्ज भोगेसु, आउ परिमिअमप्पणो॥७७॥

दोहा।

आयु अल्पजीवन अथिर, शिवसुख अक्षय जान।
काम भोगतें अति विरत, नित प्रति रहु बुधिवान ७७

आर्या।

सिवमग्गसंठिआणवि
जह दुज्जेया जियाण पणविसया।
तह अण्णं किं पि जए
दुज्जेयं णत्थि सयलेवि॥ ७८॥

---

१ बकरा। २ करके।

शिवमगगामी पुरुषकों, पांचों विषय सिवाय ।
नहीं और कछु जगतमें, जो ना जीत्यो जाय ॥ ७८ ॥

सविर्डक्कुम्भडरूवा, दिट्ठा मोहेइ जा मणं इत्थी ।
आयहियं चिंतंता, दूरयरेणं परिहरंति ॥७९॥

तोटक ।

सविकार तियावन मोहत है । अवलोकत ही मन मोहत है ।
निजआतमतत्त्व विचारत हैं ।वह दूरहितें परिहारत हैं ७९

सच्चं सुअंपि सीलं, विण्णाणं तह तवंपि वेरग्गं ।
वच्चइ खणेण सव्वं, विसयविसेणं जईणंपि ॥८०॥

दोहा ।

ब्रह्मचर्य्य श्रुत सत्यता, तप विज्ञान विराग ।
मुनि डिगतें हू विषयवश, जात निमिषमें भाग ॥८०॥

रेजीव सगइविगप्पिय, निमेससुहलालसो कहं मूढ ।
सासयसुहमसमतमं,हारिसि ससिसोअरंच जसं ८१

अरिल्ल ।

शशि सम मनहर सुजस, जासु जग अमल है ।
जा समान नहिं और, मेरु सो अटल है ॥
ऐसे सुखकी हार, करत जिय बावरे ।
निज कल्पित निमिषीक, विषयके दाव रे ॥ ८१ ॥

पज्जलिओ विसयअग्गी,
चरित्तसारं डहिज्ज कसिणंपि ।

सम्मत्तंपि विराहिय
अणंतसंसारियं कुज्जा ॥ ८२ ॥

तोटक छंद।

विषयानल पावत वृद्धि जवै।
वह दाहत चारितसार तवै ॥
गुण सम्यक शुद्ध नशावत हैं।
भव भार अनन्त वढ़ावत हैं ॥ ८२ ॥

भीसणभवकंतारे
विसमा जीवाण विसयतिण्हाओ।
जाए णडिया चउद-
स्सपुव्विवि रुलंति हु णिगोए ॥ ८३ ॥

दोहा।

विषय लालसा विषम है, भव भयवन्त पहार।
पूरवधर हू जासु वश, रुलत निगोदमँझार ॥ ८३ ॥

हा विसमा हा विसमा
विसया जीवाण जेहि पडिवंधा।
हिंडंति भवसमुद्दे अणंत-
दुक्खाइ पावंता ॥ ८४ ॥

चौपाई।

हा! हा! विषम विषय फँसि प्रानी।
दुख अनंत पावत अज्ञानी ॥

परैं भवोदधिमें अकुलावैं ।
अहो परमगुरु यों समझावैं ॥ ८४ ॥

माइंदजाल चवला
विसया जीवाण विज्जुते अ समा ।
खणदिट्ठा खणणट्ठा
ता तेसिं को हु पडिवंधो ॥ ८५ ॥

विषय चपल चपला सम जानो ।
इन्द्रजालसे छलिया मानो ॥
पलमें प्रगटैं पलहिं पलावैं ।
सो कैसैंकरि रोके जावैं ॥ ८५ ॥

सत्तु विसं पीसाओ
वेआलो हुअवहोवि पज्झलिओ ।
तं ण कुणइ जं कुविया
कुणंति रागाइणो देहे ॥ ८६ ॥

गरल[1] पिशाच शत्रु वेताला ।
प्रजुलित प्रबल अनलकी ज्वाला ॥
ह्वै सब कुपित देहिं दुख जोई ।
तो रागादिक सम नहिं होई ॥ ८६ ॥

जो रागाईण वसे, वसंमि सो सयलदुक्खलक्खाणं
जस्स वसे रागाई, तस्स वसे सयलसुक्खाइं ॥८७

1 विष ।

दोहा ।

रागादिक वश जीव जे, लक्ख दुक्खके वश्य ।
रागादिक जिन वश किये, सब सुख लहहिं अवश्य८७

केवल दुहणिम्मविए, पडियो संसारसायरे जीवो ।
जं अणुहवइ किलेसो तं आसव हेउअं सव्वं ॥८८॥

इह दुःखज संसारके, सागरमें परि जीव ।
जो दुख भोगत तासुसों, आस्रव करै सदीव ॥८८॥

ही संसारे विहिणा, महिलारूवेण मंडिअं जालं ।
वज्झंति जत्थ मूढा, मणुआ तिरिआ सुरा असुरा८९

कीन्हों विधि या जगतमें, कामनि–पाश प्रसार ।
तामें नर पशु सुर असुर, हा! हा ! बँधें अपार८९

विसमा विसय भुअंगा,
जेहिं डसिआ जिआ भववणंमि ।
कीसंति दुहग्गीहिं,
चुलसीईजोणिलक्खेसु ॥ ९० ॥

विषम विषय–विषधर डस्यों, भववनमें जिन गात ।
ते दुखमय ज्वाला सहत, धरत चौरासी जात ॥९०॥

संसारचारगिहे, विसयकुवाएण लुकिया जीवा ।
हियमहियं अमुणंता, अणहवइ अणंतदुक्खाइं ९१

---

१ जाल ।

हरिगीतिका छन्द ।

संसार मारगमें भयानक विषय लूकें बहत हैं ।
प्रगटी मनो ऋतु ग्रीष्म तामें जीव जगके तपत हैं ।
है हित कहा, अनहित कहा, सो नेकु ना चित धरत
अतिशय अनन्तानन्त दुखको हाय अनुभव करत हैं

हा हा दुरंत दुट्ठा, विसयतुरंगा कुसिक्खिया लोए
भीसणभवाडवीए, पाडंति जिआण मुद्धाणं ॥९२

पद्धरी छंद ।

हा विषय बाज इस जगमँझार ।
अति दुष्ट कुशिक्षित दुर्निवार ॥
मतिहीन दीनको देत डार ॥
अति भीषण भवअटवीमँझार ॥ ९२ ॥

विसयपिवासातत्ता, रत्ता णारीसु पंकिलसरंमि ।
दुहिया दीणा खीणा, रुलंती जीवा भववणंमि ९३

दोहा ।

विषय तृषासों तपत अति, रत्त नारि-सर-कीच ।
दीन हीन दुखिया सकल, रुलत जगत वन बीच ९३

गुणकारियाइ धणियं
धिइरज्ज णिअंतिआइ तुह
णिययाइ इंदियाइं
वल्लिणिअत्त

धीरज डोर सम्हारिकैं, इन्द्रियरूपी बाज ।
वश करि राखैं ही जिया, सुधरै तेरो काज ॥९४॥

मणवयणकायजोगा सुणिअंता तेवि गुणकरा हुंति ।
अणिअंता पुण भंजति, मत्तकरीणुव्व सीलवणं ९५

मन वच काया वश किये, करैं तेहु कल्यान ।
नातर मत्तगयंदवत, नशै, शीलउद्यान ॥ ९५ ॥

जह जह दोसा विरमइ
जह जह विसएहिं होइ वेरग्गं ।
तह तह विण्णायव्वं
आसण्णं से य परमपयं ॥ ९६ ॥

ज्यों ज्यों विषय विरागता, ज्यों ज्यों दोष विनाश ।
त्यों त्यों श्रावक सन्निकट, जानो पद अविनाश ॥९६॥

दुक्करमेएहिं कमं, जेहिं समत्थेहिं जुव्वणत्थेहिं ।
भग्गं इंदियसिण्णं, धिइपायारं विलग्गेहिं ॥ ९७ ॥

तैरुणवयसमें स्वबलतैं, सजि धीरज प्राकार ।
इन्द्री दल जिन दलमल्यौ, कीन्हों सब कृति सार॥९७॥

ते धण्णा ताण णमो, दासोऽहं ताण संजमधराणं ।
अद्धच्छिपच्छिराओ, जाण ण हियए खडकंति ९८

पद्धरी छंद ।

तिरछी चितौनितैं लखनहारि ।
नहिं वास लहै जिन चितमँझारि ॥

---

१ घोड़ा । २ जवानीमें । ३ गढ़-परकोटा । ४ स्री ।

हरिगीतिका छन्द।

संसार मारगमें भयानक विषय लूकैं बहत हैं।
प्रगटी मनो ऋतु ग्रीष्म तामें जीव जगके तपत हैं॥
है हित कहा, अनहित कहा, सो नेकु ना चित धरत हैं
अतिशय अनन्तानन्त दुखकों हाय अनुभव करत हैं ९

हा हा दुरंत दुट्ठा, विसयतुरंगा कुसिक्खिया लोए
भीसणभवाडवीए, पाडंति जिआण मुद्धाणं ॥९२॥

पद्धरी छंद।

हा विषय वाज इस जगमँझार।
अति दुष्ट कुशिक्षित दुर्निवार॥
मतिहीन दीनको देत डार॥
अति भीषण भवअटवीमँझार॥ ९२॥

विसयपिवासातत्ता, रत्ता णारीसु पंकिलसरंमि।
दुहिया दीणा खीणा, रुलंती जीवा भववणंमि ९३

दोहा।

विषय तृषासों तपत अति, रक्त नारि-सर-कींच।
दीन हीन दुखिया सकल, रुलत जगत वन बीच ९३

गुणकारियाइ धणियं
धिइरज्ज णिअंतिआइ तुह जीव।
णिययाइ इंदियाइं
वल्लिणिअत्ता तुरंगुव्व॥ ९४॥

धीरज डोर सम्हारिकैं, इन्द्रियरूपी वाज।
वश करि राखैं ही जिया, सुधरै तेरो काज ॥९४॥

मणवयणकायजोगा सुणिअंता तेवि गुणकरा हुंति।
अणिअंता पुण भंजति, मत्तकरीणुव्व सीलवणं ९५

मन वच काया वश कियें, करें तेहु कल्यान।
नातर मत्तगयंद्वत, नशै, शीलउद्यान ॥ ९५ ॥

जह जह दोसा विरमइ
जह जह विसएहिं होइ वेरग्गं।
तह तह विण्णायव्वं
आसण्णं से य परमपयं ॥ ९६ ॥

ज्यों ज्यों विषय विरागता, ज्यों ज्यों दोष विनाश।
त्यों त्यों श्रावक सन्निकट, जानो पद अविनाश ॥९६॥

दुक्करमेएहिं कमं, जेहिं समत्थेहिं जुव्वणत्थेहिं।
भग्गं इंदियसिण्णं, धिइपायारं विलग्गेहिं ॥ ९७ ॥

तेरुणवयसमें स्ववलतैं, सजि धीरज प्राकार।
इन्द्री दल जिन दलमल्यौ, कीन्हों सब कृति सार॥९७॥

ते धण्णा ताण णमो, दासोऽहं ताण संजमधराणं।
अद्धच्छिपच्छिराओ, जाण ण हियए खडकंति ९८

पद्धरी छंद।

तिरछी चितौनितें लखनहाँरि।
नहिं वास लहै जिन चितमँझारि ॥

---

१ घोड़ा। २ जवानीमें। ३ गढ़-परकोटा। ४ स्त्री।

ते धन्य धन्य सनियमधारि ।
हौं दास करौं जिहि नमस्कारि ॥ ९८ ॥

किं बहुणा जइ वंछसि, जीव तुमं सासयं सुहं अरुहं ।
ता पियसु विसयविमुहो, संवेगरसायणं णिच्चं॥९९॥

सोरठा ।

निरुज अखय सुख जीव, चाहै तो तज विषय नित ।
संवेगामृत पीव, सार कहा बहु वादमें ॥ ९९ ॥

अनुवादककी प्रार्थना ।

इन्द्रिय चोर चलाक, चुरावत चारित ज्ञाना ।
तिनकों है यह ग्रंथ, शरद शशि सम भयवाना ॥
यों करि दृढ़ विश्वास, देश भाषामयकीन्हों ।
होहु सदा जयवंत, मोर यह यत्न नवीनों ॥
पढ़ै सुनै अनुभवै, स्वपरहितकारक जानी ।
पावहिं सो विसराम, होयकर दृढ़श्रद्धानी ॥
करहिं अमल निज चरित, सुपथ गहि आतम ज्ञानी ।
तो मम श्रम है सफल, लहै जय गुरुवरवानी ॥
मैं मति मन्द अजान, धरमको मरम न जानौं ।
शब्द अर्थ अरु उभय,-माहिं असमर्थ अजानौं ॥
अति उपयोगी ग्रंथ, देखि मति मोर लुभानी ।
गहहु-तजहु जिमि हंस, सुगुण अवगुण पय पानी ॥

[समाप्तोऽयं ग्रन्थः]

अखय=अविनाशी ।